6 मई का रांची एक्सप्रेस

म्यांमा में उथल पुथल के आसार

शशिधर खां

वैसे तो म्यांमा की तानाशाही सैनिक सरकार हजारों विरोधियों को मौत की नींद सुला चुकी है और आए दिन जनतंत्र समर्थकों को गोलियों से उड़ाने की सूचना दबाने की कोशिशों के बावजूद अन्य देशों को मिल जाती है। मगर जिस एक मौत ने निरंकुश हुक्मरानों के पत्थर दिल को हिला दियां वह है देश की सबसे प्रभावशाली नेता आन सान सू की के ब्रितानी पति माइकल एरिस की लंदन में कैंसर से हुई मौत (28 मार्च)। माइकल एरिस लंदन विश्वविद्यालय में तिब्बती अध्ययन संस्थान के प्रोफेसर थे और पूरा वैवाहिक जीवन तकरीबन उन्होंने अकेले ही गुजारा। वह अपनी पत्नी से मिलने आ नहीं सकते थे क्योंकि उनके म्यांमा प्रवेश पर रोक थी, न ही सू की अपनी मर्जी के मुताबिक कहीं आ-जा सकती थीं। यहां तक कि अंतिम सांस लेने के समय भी पति-पत्नी की एक बार मिल जाने की इच्छा म्यांमा के सैनिक जनरलों ने पूरी नहीं होने दी। माइकल एरिस की मृत्यु के समय की परिस्थितियां, देश की जनता के लिए आन सान सू की त्याग और सैनिक सरकार के व्यवहार ने न केवल म्यांमा में, बल्कि पूरे एशिया तथा पश्चिम जगत में भी खलबली मचा कर रख दी है।

माइकल एरिस का इलाज तो काफी समय से चल रहा था और इसलिए वे दोनों बच्चों को अपनों से दूर-दूर रखते थे। पर जब उन्हें पक्का यकीन हो गया कि कभी भी उनकी मौत हो सकती है तो उन्होंने अत्यंत करुण भाषण में म्यांमा सरकार से येंगो (येंगून) आने के लिए वीजा देने का आग्रह किया। उनकी अंतिम इच्छा पत्नी को देखते हुए दम तोड़ने की थी। मगर संवेदनहीन जनरलों ने माइकल एरिस को वीजा नहीं दिया और उल्टे ऐसी अमानवीय परिस्थिति का राजनीतिक फायदा उठाने की बात चली। जनरलों ने सोचा क्यों न इसी बहाने सूकी से निजात पा लिया जाए, क्योंकि उनका देश में रहना शासकों के हृदय में तीर की तरह चुभता रहता है। येंगो की सैनिक जनता सरकार का एक गुमाश्ता सूकी के पास यह संदेश लेकर गया कि माइकल एरिस को तो म्यांमा आने की इजाजत नहीं दी जा सकती मगर सू की को लंदन जाने की अनुमति मिल सकती है। लेकिन म्यांमा में जनतांत्रिक आंदोलन का पर्याय बन चुकी सू की ने यह कहकर प्रस्ताव ठुकरा दिया कि जिन देशवासियों के लिए पति के जीवित रहते हुए वैधव्य का जीवन जीती रही, उनका साथ कुछ पलों के आत्मसुख के वास्ते नहीं छोड़ सकती। सू की ने देश की जनता के सामने साफ शब्दों में स्पष्ट कर दिया कि सरकार उन्हें इसी को मुद्दा बनाकर देश से निकालने की कोशिश कर रही है और देशवासियों के सामने उनकी छवि खराब करने के लिए भावनाओं से खिलवाड़ करना चाह रही है। सू की ने कहा कि उन्हें पूरा यकीन है कि अगर म्यांमा से बाहर कदम रखा तो सरकार फिर वापस कतई नहीं आने देगी जो उनके लिए पति की मौत से ज्यादा तकलीफ देने वाला साबित होगा। अपनी सारी इच्छाओं की बलि चढ़ाकर सू की तड़पती रही, इस आशा के साथ कि देश की जनता उनके जजबातों को महसूस करेगी, पर सूकी ने निर्ममता की पराकाष्ठा पर उतरी सरकार की चाल कामयाब नहीं होने दी। वे अपने पति की अंतिम इच्छा पूरी कर नहीं कर पायीं, यहां तक कि अंत्येष्टि में भी शामिल नहीं हो सकीं, लेकिन म्यांमा की जनता की धड़कनों में रची बसी सान सू की के दिल के अंदर उठते तूफान ने पूरे देश में तूफान मचाकर रख दिया है। पूरा देश गुस्से में उबल रहा है।

जिस दिन माइकल एरिस ने दम तोड़ा (28 मार्च) को उनका 53वां जन्मदिन था और घर का कोई सदस्य बधाई देने के लिए उनके पास मौजूद नहीं था। इस दर्द भरी घटना ने पूरे संसार को झंकझोर दिया है और म्यांमा में वैसे उथल-पुथल का माहौल बन रहा है जिससे जनरलों को आज से पहले सबका नहीं पड़ा।

संपूर्ण मानवता को कलंकित करने वाली यह हृदय विदारक मौत म्यांमा सरकार के लिए बड़ी महंगी साबित हुई क्योंकि इसने वर्षों से सुलग रही आग में फूंक मार दी है। सरकार के सामने असमंजस की स्थिति है, क्योंकि दमनात्मक रवैए से विरोध की आवाज दबाने के आदी हो चुके सैनिक अधिकारियों को लग रहा है कि जनता के आक्रोश का बंदूक की गोली सामना नहीं कर पाएगी। जनता ने सरकार की हर सफाई को ठुकरा दिया है। चारों तरफ कोलाहल मचा है। अपनी घुटन और तपन को पीकर जिस त्याग की मिसाल एन.एल.डी. (नेशनल लीग फॉर डेमोक्रेसी) अध्यक्ष सान सू की ने अपने देश के सामने पेश की है उसका सबसे ज्यादा असर छात्रों पर पड़ा है। सारे कॉलेजों के छात्र सरकार के खिलाफ सड़कों पर उतर आने को आमादा हैं। 'बैंकाक टाइम्स' ने येंगो विश्वविद्यालय सूत्रों के हवाले से छापा है कि कैम्पस में 1988 जैसा वातावरण नजर आ रहा है जब तत्कालीन शासक ने विन को हजारों छात्रों की हत्या करवाने के बावजूद देश छोड़कर भागना पड़ा। छात्रों ने अपने विरोध का परिचय दो अप्रैल को सान सू की के सैनिक चहारदीवारी से घिरे निवास स्थान पर शोकसभा आयोजित करके दिया। कड़ी पाबंदी के बावजूद हजारों की संख्या में लोग, जिनमें ज्यादातर छात्र थे, अहाते के अंदर घुस गए और शोक में डूबी मगर चेहरे पर दृढ़ आत्मविश्वास लिए अपनी नेता के दुःख में शरीक हुए। भारी अफरा-तफरी के बावजूद सैनिकों ने हथियारों का इस्तेमाल नहीं किया। ऊपर से उन्हें वैसा ही आदेश था, क्योंकि सरकार मौजूदा हालात के मद्देनजर लोगों के उत्तेजित होने का खतरा नहीं मोल लेना चाहती थी। लेकिन हुक्मरानों को जनता के बदले हुए तेवर का अंदाजा लग गया है और उसके बाद से सुरक्षा व्यवस्था सख्त कर दी गई है।

सान सू की के घर के चारों ओर फिर से कड़ा पहरा बिठा दिया गया है, मिलने-जुलने वालों पर रोक है और उनके टेलीफोन के तार काट दिए गए हैं। कुल मिलाकर एक प्रकार से उन्हें 1990 की तरह ही नजरबंद कर दिया गया है, जब नेशनल लीग फॉर डेमोक्रेसी की चुनाव में भारी जीत को सरकार ने मानने से इंकार कर दिया था। इस कड़ाई को उचित ठहराने की असफल चेष्टा में सरकार ने सफाई दी है कि सान सू की अभी दुखी है, इसलिए उनकी शांति में बाधा न होने देने के लिए मिलने-जुलने वालों पर रोक लगा दी गई है। इसके विरोध में तीन और चार अप्रैल को बैंकाक स्थित म्यांमा दूतावास के सामने छात्रों ने प्रदर्शन किया। शोक पुस्तिका पर हस्ताक्षर करने वालों में पश्चिमी देशों के राजनयिकों का तांता लगा हुआ था, लेकिन उस समय एशिया के लिए बड़ा शर्मनाक दृश्य था जब दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के प्रतिनिधियों ने अपनी ही बिरादरी के देश में एक ऐसी शख्सियत के दुःख में शरीक होने की जरूरत नहीं समझी जिसने जनतंत्र के लिए अपने जीवन की सारी खुशी नीलाम कर दी। इसमें अकेले फिलीपीन्स ने पंगा लिया जहां के प्रतिनिधि ने सान सू की के निवास पर पहुंचकर न केवल शोक पुस्तिका पर अपने हस्ताक्षर अंकित किए बल्कि जनतंत्र की बहाली के लिए लड़ी जा रही उनकी लड़ाई को सही ठहराया और ढांढस बंधाया। ये वही एशियन देश हैं, जिन्होंने 1996 में इंडोनेशिया के राष्ट्रपति सुहार्तो की इस शर्त के गंभीरता से नहीं लिया कि अगर म्यांमा को उनकी टोली में आना है तो पहले 1990 के जनादेश को स्वीकारते हुए नेशनल लीग फॉर डेमोक्रेसी के हाथ में सत्ता सौंप देनी होगी। अब जब सारा संसार म्यांमा सरकार के मौजूदा रवैए पर थू-थू कर रहा है, तब दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों को अपने किए पर पछतावा हो रहा है। उन्हें न तो म्यांमा का समर्थन करते बन रहा है न ही विरोध। दूसरी ओर येंगो की सत्तारूढ़ सैनिक जनता को बेचैनी लगातार बढ़ रही है, क्योंकि पश्चिमी देशों की ओर से दबाव बढ़ता जा रहा है जिसके चलते पहले की तरह कठोर दमन। नीति जारी रखना भी कठिन साबित हो रहा है।

> **संपूर्ण मानवता को कलंकित करने वाली यह हृदय विदारक मौत म्यांमा सरकार के लिए बड़ी महंगी साबित हुई क्योंकि इसने वर्षों से सुलग रही आग में फूंक मार दी है। सरकार के सामने असमंजस की स्थिति है, क्योंकि दमनात्मक रवैए से विरोध की आवाज दबाने के आदी हो चुके सैनिक अधिकारियों को लग रहा है कि जनता के आक्रोश का बंदूक की गोली सामना नहीं कर पाएगी। जनता ने सरकार की हर सफाई को ठुकरा दिया है। चारों तरफ कोलाहल मचा है।**

पश्चिमी देशों की एक खास आदत है कि जिस देश की किसी भी परिस्थिति से कुछ लेना-देना न हो, वैसे देशों में अगर इस तरह की अमानवीय घटना हो जाती है तो उनकी संवेदनाएं अचानक उफन पड़ती है और उन देशों की ओर से मानवाधिकार तथा इंसानियत से जुड़े पहलुओं की दुहाई देनी शुरू हो जाती है। अमेरिका अगर अभी कोसोवो में नहीं उलझा होता है तो म्यांमा के खिलाफ तरह-तरह के प्रतिबंधों की घोषणा हो जाती। हालांकि अमेरिका ने व्यापारिक प्रतिबंध 1991 में लगा दिए थे, जब आन सान सू की को नजरबंदी के दौरान ही नोवेल शांति पुरस्कार प्रदान किया गया है और उन्हें ग्रहण करने के लिए देश से बाहर जाने की इजाजत नहीं दी गई। खासकर अभी म्यांमा को जिस तरह की प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करना पड़ रहा है, उसमें पश्चिमी देशों की प्रतिक्रिया निश्चय ही जनतंत्र समर्थकों का मनोबल बढ़ाएगी और इस घटना का चित्रण भी पश्चिम के अखबारों ने बड़े ही मार्मिक ढंग से किया है।

आन सान सू की के पिता आन सान ने भी देश के लिए प्राणों की आहुति दी जिनका म्यांमा को आजाद कराने में महत्वपूर्ण योगदान था। ने विन ने वैचारिक मतभेद के कारण उन्हें मरवा दिया। इसलिए इस फौलादी महिला के लिए यह दुःख नया नहीं है। जिस जनांदोलन को ने विन 1987-88 में लगभग दबा चुके थे। उसे सान सू की ने सभी छोटे-बड़े दलों को साथ लेकर जिंदा रखा और 1990 में सरकार को चुनाव कराने को मजबूर कर दिया। चुनाव में सत्तापक्ष की ओर से बड़े पैमाने पर की गई धांधली के बावजूद जनता ने विपक्षी गंठबंधन नेशनल लीग फॉर डेमोक्रेसी को बहुमत से विजयी बनाया। लेकिन सैनिक सरकार ने आंतरिक और बाह्य दबाव के रहते हुए भी सत्ता से हटने से इंकार कर दिया। जनता के प्रबल विरोध के कारण एन.एल.डी. नेता सू की को अपने घर में नजरबंद कर दिया गया। बाद में पश्चिमी देशों के दबाव के चलते 1995 में उन्हें नजरबंदी से मुक्त किया मगर उनके कहीं आने-जाने पर रोक बरकरार रही। सू की की रिहाई के दिन (20 मई) भी उनके निवास पर पश्चिम के राजनयिकों की बधाई देने के लिए जुटी भीड़ से सैनिक सरकार जरा-सा विचलित जरूर हुई पर कोई खास अंतर नहीं पड़ा। क्योंकि सरकार टिकी है और कभी यह कहकर कि जीते हुए सांसद अनुभवहीन हैं तो कभी ये कि इनके नेता ने विदेशी से शादी की हुई है जिसके हाथ में देश की बागडोर सौंपना म्यांमा का अपमान है, विजयी गंठबंधन के आगे झुकने को तैयार नहीं है। म्यांमा के वर्तमान शासक साउ माऊंग उस धरातल पर टिके हैं, जिसकी बुनियाद बुद्ध और मार्क्स की दुहाई देकर सत्ता में अपने बने रहने का औचित्य सिद्ध करने वाले ने विन की तैयार की हुई है। इस सरकार को आज की तरह के भूडोल का सामना पहले कभी नहीं करना पड़ा है। लेकिन अब लग रहा है कि हजारों लाखों जनता के खून से रंगे इन सैनिक जनरलों को सान सू की का दर्द ही लील जाएगा।